समाधान :- भक्ति तो आती ही है। क्योंकि अन्दर भावना तो देव-गुरु-शास्त्र पर भक्ति आये बिना तो रहे ही नहीं। फिर बाह्य क्रिया किसप्रकार की हो उसका कोई नियम नहीं है। उसे भाव में तो भक्ति आये बिना रहती नहीं। क्योंकि खुद को जिस मार्ग रुचि हुई है, स्वयं को जो आत्मा के स्वभाव का प्रेम हुआ है, वह स्वभाव जिसने प्रगट किया और जिसने पहचान करवाई ऐसे गुणसे भरे देव, गुरु और शास्त्र पर उसे भक्ति आये बिना रहती नहीं। उसे ऐसा नहीं लगता कि यह मेरा स्वभाव है, यह तो शुभभाव है, ऐसा नहीं होता। दृष्टि में वह समझता है कि यह शुभभाव मेरा स्वभाव नहीं है। बाकी जबतक पूर्णता प्राप्त नहीं हुई तबतक देव-गुरु-शास्त्र की भक्ति आये बिना रहती नहीं। फिर शब्दों में आये नहीं आये, बाह्य क्रिया में आये नहीं आये, लेकिन उसे अंतर में तो आये बिना रहती नहीं।

मुमुक्षु :- बाहर में कोई व्यक्त कर सके या नहीं भी कर सके।

समाधान :- हाँ, नहीं भी कर सके। लेकिन उसे अंतर में भावना आये बिना रहती नहीं। आचार्य भी लिखते हैं, पहले भगवान का नाम लिखते हैं। जो जिनवरने कहा है वह मैं कहता हूँ। आचार्य भी ऐसा कहते हैं। और विचार करे, मुनि आदि विचार करे तो द्रव्य-गुण-पर्याय का स्वरूप विचारे तो भगवानने क्या कहा है? ऐसे उन्हें भगवान का विचार आये बिना रहता नहीं।

मुमुक्षु :- इतनी उच्च भूमिका में पहुँचने के बाद भी ऐसा विनय का भाव आता है, तो सामान्य ज्ञानी को और ज्ञानी होनेवाले को ऐसा भक्तिभाव अन्दर आता है।

समाधान :- आना चाहिये। दो द्रव्य भिन्न है और मेरा स्वभाव नहीं है, इसलिये भक्तिमें-से ऊड़ नहीं जाती। वह तो वस्तुस्वरूप समझना है कि दो द्रव्य भिन्न हैं और शुभभाव है वह मेरा स्वरूप नहीं है। उससे भी स्वयं भिन्न है। ऐसे वस्तु स्वरूप समझे, उस रूप परिणति हो। लेकिन अधूरी भूमिका में शुभभाव आये बिना रहते नहीं। तो जिज्ञासु की भूमिका में भी गुरुने क्या कहा है? गुरु का आशय क्या है? ऐसी भावना आये बिना रहती नहीं, ऐसे विचार आये बिना रहते नहीं। फिर ऐसा नहीं आता कि मैं सब समझ गया, अब क्या काम है? ऐसे विचार नहीं आते। उसे ऐसा लगता है कि अभी तो बहुत करने का बाकी है। वहाँ समझ गया ऐसा कहाँ आता है? अभीव तो सम्यग्दर्शन होने के बाद भी ऐसा नहीं आता कि समझ गया। तो फिर जहाँ समझा ही नहीं है वहाँ मुझे सब समझ में आ गया (ऐसा कहाँ-से आये)? भावना नहीं आती? गुरुने कहाँ क्या कहा है? उनका आशय क्या है? कितना समझना है? ऐसा उसे आये नहीं, जहाँ यथार्थ मुमुक्षुता प्रगट हुई है वहाँ ऐसा नहीं आता।

मुमुक्षु :- माताजी! मुझे तो थोड़ा और भी पूछना है कि देव-गुरु के प्रति तो प्रत्येक ज्ञानी को अथवा ज्ञानी होनेवाले को भक्ति आती ही नहीं, लेकिन खुद के जो उपकारी हैं उनके प्रति देव-गुरुसे भी अधिक भक्ति का भाव आता होगा, ऐसा है?

समाधान :- अपने उपकारी है?

मुमुक्षु :- हाँ, स्वयं को जिसके निमित्तसे सम्यग्दर्शन प्राप्त हुआ है अथवा सम्यग्दर्शन प्राप्त होने में निमित्तकारण हो सके ऐसा है, उनके प्रति सामान्य देव-गुरु के प्रति जो भक्ति का भाव आता है उससे भी ज्यादा भक्ति आये उसका कोई नियम है क्या?

समाधान :- जिसने उपकार किया है, मार्ग जिसने प्रगट किया है ऐसे गुरु, जिन्होंने मार्ग बताया ऐसे गुरु, मार्ग में जो निमित्त हुए हैं ऐसे गुरु, उनके प्रति विशेष भक्ति यानी देव-गुरु-शास्त्र सब, गुण अपेक्षासे वह सब समझता है कि जो पूर्ण हो गये, जो मुनि साधना करते हैं उनकी क्या भमिका, देव की क्या भूमिका उस अनुसार सबके प्रति भक्ति आती है। लेकिन यह उपकारी गुरु हैं, ऐसा समझकर उसप्रकारसे उस अपेक्षासे विशेष आती है।

मुमुक्षु :- नियमसे आती है। प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार, एवो लक्ष्य थया विना, ऊगे न आत्मविचार।

मुमुक्षु :- आप की दो दिन की भक्ति सुनने के बाद मुझे ऐसा ही भाव आया कि आपने कहा वह बराबर के देव के स्वरूप को यथार्थ समझे, निर्ग्रंथ गुरु हों तो उनके स्वरूप को यथार्थ समझे, ऐसा होनेपर भी जिनका प्रत्यक्ष उपकार हुआ है अथवा जिनका उपकार प्रत्यक्ष होने की संभावना है, उनके प्रति ज्ञानी को और मुमुक्षु को विशेष भक्ति आये, ऐसा नियम होगा क्या?

समाधान :- विशेष आये, ऐसा नियम है। आये बिना रहे ही नहीं। उसमें दूसरे का निषेध नहीं होता। सब जैसा है वैसा (समझता है), भक्ति यथायोग्य भूमिका देव-गुरु-शास्त्र (की है) उस अनुसार ही आती है। लेकिन उपकार हुआ है उनके प्रति विशेष आती है।

मुमुक्षु :- कुन्दकुन्दाचार्यने कहा, जिन कथन भाषा सूत्रमय, शाब्दिक वः ए जाण्युं शिष्ये भद्रबाहु तणा अने एम ज ... जस बोध द्वादश अंगनो, चौदश पूर्व विस्तारनो, जय हो श्रुतंधर भद्रबाहु गमकगुरु भगवाननो। वह कोई कम भक्ति की है?

समाधान :- अपने गुरु का नाम लेकर बोलते हैं।

मुमुक्षु :- हाँ, दो बार, तीन बार कहा है। ऐसा ही है। शिष्यने जाना है। कुन्दकुन्दाचार्यने जाना ऐसा नहीं, ते जाण्युं शिष्ये भद्रबाहु तणा। मैंने तो वही कहा है, जो जाना है वह।

समाधान :- अपने गुरु का नाम खास अलग लेकर कहते हैं। प्रत्येक देव-गुरु-शास्त्र की भक्ति करे उसमें गुरु का नाम अलग लेकर कहते हैं।

मुमुक्षु :- तत्क्षण लाभ का कारण तो ये होते हैं न। आज हमें बहिनश्री के योग में जो जानकर लाभ होता है तो हमें (भक्ति) आये ही आये, उसमें कोई शंका नहीं है। हमारे लिये तो साक्षात् भगवान ही है, ऐसा ही समझो न! भगवान का स्वरूप हमें दर्शा ही रहे हैं न! यह कोई विवेक की बात नहीं है। ह्रदय की बात है कि हमको दूसरे साक्षात् भगवान कहाँ देखने जाना है? मैं तो सबको ऐसा ही कहता हूँ कि हमें तो साक्षात् भगवान

ही मिल गये हैं। इससे अधिक हमें क्या चाहिये?

समाधान :- गुरुदेव सभी को साक्षात् ही मिले थे और साक्षात् वाणी सबने सुनी है। गुरुदेव का परम-परम उपकार है। साक्षात् ही सभी को मिले हैं। यहाँ तो जो गुरुदेवने कहा है वह कहते हैं।

मुमुक्षु :- लेकिन बहिनश्री ! उस वक्त तो ऐसा विवेक जागृत नहीं हुआ था, आज उनकी गैरहाजरी में गुरुदेव याद आते हैं तो अब हमें ख्याल आता है कि ओहो..! बहिनश्री जो कहते हैं वही बात सत्य है। महिमा उनका ही लेकिन इनके द्वारा यहाँ अब आता है। उस वक्त इतना ख्याल नहीं आता था, अब समझ में आता है। और गुरुदेव के भी बहिनश्री के प्रति जो भाव थे उसका प्रयोजन भी आज समझ में आता है। इशारा में समझाकर गये, अब भूलना मत। मैं आप सभी को सौंपकर जाता हूँ, कहकर जाता हूँ। और देखिये, शासन भी गुरुदेव की हयाती थी उससे भी अभी बिलकूल शांतिसे, स्वस्थतासे, सुंदरतासे चल रहा है। जिनको जाना था वह गये, जिनके रहा था वह रहे और जिनको शांतिसे अभ्यास करना है वे अच्छी तरह कर सकते हैं। यह अपार उपकार है, यह हकीकत है। जिसमें न्यूनता थी, उनको लगा, अपना यहाँ काम नहीं है और जो पक्के, सच्चे और निष्ठावान थे वे टिक गये। यह हकीकत है। बहुत प्रमाणिकतासे जो कुछ सूझ-समझ है उस अनुसार कहता हूँ, यह हकीकत बिलकूल सत्य हकीकत है।

और दूसरी बात, लोगों को गुण और पुण्य का विचार नहीं है। अभी तो पापानुबंधी पुण्य और पुण्यानुबंधी पुण्य किसे कहते हैं, उसका ख्याल नहीं है। किसके साथ टक्कर लेते हैं यह मालूम नहीं है। टक्कर किसके सामने? अथाग पुण्य के धनी, उनके साथ!

समाधान :- ये सब कुछ बोलने की जरूरत नहीं है। गुरुदेवने तो पूरा निर्माण किया है। यह सब तो चलता है। गुरुदेवने तो पूरा परिवर्तन किया है। पूरे संप्रदाय का परिवर्तन किया है। वह बात अलग थी। उनकी प्रभावना, विकल्प, उनका जो प्रभावना का विकल्प, उनकी वाणी पूरा परिवर्तन लाये। वह बात अलग थी। अभी तो सब ठीक है। वह कोई बात नहीं।

मुमुक्षु :- माताजी! एक और प्रश्न है। दो दिन पहले थोड़ी चर्चा हुई थी लेकिन पूर्ण समाधान नहीं हुआ था। सविकल्प निर्णय का यथार्थ स्वरूप क्या है? उसका सम्यग्दर्शन में कारणपना कितना है? उसकी मर्यादा कितनी?

समाधान :- सविकल्प में?

मुमुक्षु :- सविकल्प यथार्थ निर्णय का स्वरूप क्या है? और उसका सम्यग्दर्शन प्राप्त होने में उसका कारणपना कितना? और वह महिमा करने योग्य हो तो किसप्रकारसे?

समाधान :- सविकल्प में सम्यग्दर्शन का कारणपना कितना? और महिमा किसकी? सविकल्प निर्णय की? किसकी?

मुमुक्षु :- जी हाँ।

समाधान :- उसका कारणपना इतना कि यदि यथार्थ कारण हो तो उसमें निर्विकल्प दशा प्रगट होने का कारण होता है। वह महिमा। बाकी अभी उसके वेदन में या उसकी धारा में अभी कोई फेरफार नहीं हुआ है। बाकी उसका निर्णय यदि यथार्थ हो तो उसे सविकल्पमें-से निर्विकल्प दशा और भेदज्ञान की धारा प्रगट होने का कारण बनता है। यदि यथार्थ कारण हो तो। विकल्पसे किया हुआ निर्णय, लेकिन स्वभाव को पहचानकर कि यह मेरा स्वभाव है, यह विभाव है। स्वभाव को खुद मूल वस्तुमेंसे पहचाने कि यह जो ज्ञायक है, एक गुण को ग्रहण नहीं करके, गुणी को ग्रहण करे और उसप्रकार यथार्थ निर्णय करे कि यह वस्तु-अस्तित्व है वही मैं हूँ, इसके सिवा अन्य जो विभाव पर्यायें होती हैं, वह मेरा स्वरूप नहीं है। जो अंतरमेंसे शुद्ध पर्याय प्रगट हो वह शुद्ध पर्याय द्रव्य-गुण की जाति की पर्याय हो। यह विभावपर्याय मेरा स्वरूप नहीं है। यथार्थ निर्णय द्रव्य-गुण-पर्याय का बराबर करे तो वह निर्विकल्प दशा होने का कारण होता है। लेकिन उसमेंसे उसे भेदज्ञान की धारा प्रगट हो तो निर्विकल्प दशा प्रगट होती है।

मुमुक्षु :- मोक्षमार्ग प्रकाशक में तत्त्व का निर्णय करना उतना ही तेरा पुरुषार्थ है। तत्त्व का निर्णय यानी यथार्थ द्रव्य-गुण-पर्याय के स्वरूप पूर्वक मैं ज्ञायक ही हूँ, ऐसा सविकल्पात्मक निर्णय। वहाँ इतना वज़न दिया कि तुझे तत्त्व का निर्णय, तुझे तो बुद्धिपूर्वक यदि कुछ करना है तो तत्त्व का यथार्थ निर्णय करना है वह है। कल गुरुदेव के प्रवचन में भी यह बात आयी कि एकने अनुभव करके आत्मा को जाना है और एकने आत्मा का अनुभव यानी वेदन नहीं हुआ है, लेकिन फिर भी शास्त्र द्वारा समझकर आत्मा का निर्णय किया है, तो उसकी क़ीमत भी कोई कम नहीं है। तो वहाँ क्या विशेष कहना चाहते हैं? यह मुझे आपको पूछना था।

समाधान :- वह उसका कारण बनता है इसलिये क़ीमत कम नहीं है। कारण में उसकी क़ीमत कोई कम नहीं है। कारण में यदि कार्य अवश्य आये, ऐसा कारण हो तो उसकी क़ीमत कोई कम नहीं है। कारण कोई अलग प्रगट हुआ है, वह कोई अपूर्व कारण प्रगट हुआ है कि जिसके पीछे अवश्य कार्य आनेवाला है। इसलिये उसकी क़ीमत कम नहीं है। क्योंकि वह कारण प्रगट हुए बिना कार्य आता नहीं। कारण किसीको प्रगट नहीं हो, कारण लंबे समय तक चले और कार्य होने में देर लगे तो भी वह कारण ऐसा कोई अपूर्व प्रगट हुआ है कि जिसके पीछे कार्य हुए बिना रहता नहीं। इसलिये उसे कारण का आरोप देकर वह कारण भी कोई अपूर्व कारण है। कार्य में कारण का आरोप तो बराबर है, लेकिन वह कारण ही अपूर्व है कि जिस कारण के पीछे कार्य आनेवाला ही है। वह तत्त्व का निर्णय ही ऐसा है कि उस तत्त्व के निर्णय में आगे पुरुषार्थ करनेवाला है और भेदज्ञान और द्रव्य पर दृष्टि यथार्थरूपसे करके आगे जानेवाला है। इसलिये उसकी क़ीमत भी कुछ कम

नहीं है। क्योंकि मुक्ति के मार्गपर उसकी परिणमन धारा प्रगट होगी ही।

मुमुक्षु :– उसने यथार्थ का सेवन किया है। दूसरे कोई कारण–भक्ति करे, कुछ दूसरा करे उससे भी जो इस निर्णय तक आया है, उसे कार्य–सम्यग्दर्शन रूपी कार्य प्रगट होने का यथार्थ कारण उसने बोया है।

समाधान :– हाँ, यथार्थ कारण बोया है। भक्ति है वह सीधा कारण नहीं होता। सीधा कारण तत्त्व निर्णय वह मुख्य कारण बनता है। भक्ति बीच में आये बिना रहती नहीं। उसे महिमा आये। जैसे आत्मा की महिमा आनी चाहिए और जिन्होंने ऐसी दशा प्रगट की ऐसे गुरु की, देव की उनकी महिमा आनी चाहिये। यदि अन्दर महिमा नहीं हो, बाह्य में जिसने ऐसे आत्मा का स्वरूप प्राप्त किया उनकी महिमा नहीं हो तो उसे वास्तव में आत्मा की भी महिमा नहीं है। आत्मा की महिमा जिसे आये उसे गुरु की महिमा आये और गुरु की महिमा यदि यथार्थ आये तो आत्मा की महिमा आये बिना रहती नहीं। अन्दर महिमा आये बिना वह आगे नहीं बढ़ नहीं सकता। लेकिन मात्र महिमा हो और कुछ समझे नहीं तो भी आगे बढ़ नहीं सकता। इसलिये तत्त्व निर्णय करे तो वह आगे जाता है। इसलिये तत्त्व निर्णय उसका मुख्य कारण बनता है। तत्त्व निर्णय रुखा करे और समझने के लिये समझ ले तो वह सत्य कारण नहीं है। उसे अन्दर रुखा निर्णय नहीं होता। वस्तु की महिमा होती है कि ओहो..! आत्मा ऐसा पदार्थ है! ऐसा आश्चर्यकारी तत्त्व मुझे कैसे प्रगट हो? ऐसा आत्मा का आश्चर्य और अनुपम स्वरूप की महिमा आये, उसे गुरु की महिमा आये बिना रहती नहीं। इसप्रकार उसे सम्बन्ध है। बाकी तत्त्व निर्णय उसे मुख्य कारण बनता है। उसके साथ, तत्त्व निर्णय के साथ उसे अमुक प्रकार का वैराग्य भी होता है। उसे यह राग और विभावसे विरक्ति हो जाती है। यह कुछ नहीं चाहिये, उसमें कहीं भी रस नहीं है। एक आत्मा ही सर्वस्व है, आत्मा ही सारभूत है। उसे अन्दरसे निरसता आ जाती है। अंतर में वह भी होता है। महिमा होती है, वैराग्य होता है और तत्त्व निर्णय होता है। सब साथ में हो तो आगे बढ़ता है। उसमें तत्त्व निर्णय मुख्य है लेकिन सब प्रकारसे तत्त्व निर्णय महिमायुक्त, विरक्तियुक्त और भक्तिपूर्वक का होता है। इसप्रकार का होता है।

मुमुक्षु :– मुख्य भले तत्त्व निर्णय रहा, लेकिन उसके साथ यह सब होता है।

समाधान :– यह सब होता है, नहीं तो निर्णय रुखा हो जाता है। तो वह सच्चा कारण नहीं बनता।

मुमुक्षु :– बहुत सुन्दर जवाब दिया, माताजी! कार्य का कारण कहकर उसकी जितनी महत्ता है उतनी महत्ता भी आपने समझाई और उसके साथ भक्ति, वैराग्य आदि भी साथ में होता है, तब जाकर इस निर्णय में रुखापन नहीं आता, नहीं तो रुखापन आ जायेग।

समाधान :– रुखापन आ जायेगा। भक्ति में भले बाह्य कार्य दिखाई नहीं दे, कुछ बोले नहीं, कोई कार्य में जुड़े ही ऐसा भी नियम नहीं है, लेकिन उसका निषेध अन्दरसे नहीं

आता। कितना जुड़े वह उसकी खुद की भावना पर है। बाकी उसका निषेध नहीं आता। सबकुछ उसके साथ होता ही है।

मुमुक्षु :- मुख्य बात-उसे निषेध नहीं होता।

समाधान :- निषेध नहीं होता।